JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

प्रेमचंद की कहानियों में चित्रित स्त्री-छवि

अमीनुद्दीन

(शोधार्थी, अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, अलीगढ़, भारत)

सारांश –

स्त्री-चिंतन की दिशा में प्रेमचंद का योगदान नींव की ईंट की भांति है जो समाज निर्माण में अपनी अहम भूमिका निभाता है। स्त्री, जिसके बिना समाज अधूरा है और जो पुरुष को आधार देती है, उससे स्पर्धा नहीं करती। प्रेमचंद जी के स्त्री पात्रों ने शारीरिक सौंदर्य को महत्व न देकर हमेशा संघर्ष, परिश्रम, नैतिक मूल्य, मानवीय मूल्य और सच्चाई को महत्व दिया है। उन्होंने स्त्री को जहां माँ, बेटी, बहू, पत्नी, सास, ननद इत्यादि पारिवारिक रिश्तों में चित्रित करते हुए उनके मनोभावों को व्यक्त किया वहीं सामाजिक-राजनीतिक जीवन में स्त्री के विविध रूपों को भी चित्रित किया है।

बीजशब्द – पितृसत्तात्मक, संघर्ष, मूल्य, सशक्तिकरण, परंपरा इत्यादि।

प्रस्तावना -

प्रेमचंद ने स्त्री पात्रों को केंद्र में रखकर लगभग डेढ़ सौ कहानियाँ लिखीं। जिसमें प्रत्येक कहानी किसी न किसी रूप में स्त्री जीवन से जुड़ी कोई न कोई समस्या उठाती है और स्त्री की विविध छवियों का चित्रांकन करती है। प्रेमचंद की आरंभिक कहानियाँ आदर्शवादी थीं जिसमें वह हृदय परिवर्तन के माध्यम से समस्या का समाधान उपस्थित कर देते थे किंतु उत्तरोत्तर उनकी कहानियों में घटनाओं के स्थान पर अनुभूतिपरक यथार्थ का अंकन दिखाई देने लगता है। "उनकी कहानियों के विकास के तीसरे चरण में (1930-1936) नशा, मिस पद्मा, पूस की रात, कफ़न, आदि कहानियाँ आती हैं। इन कहानियों में वे सामान्यतः यथार्थवादी हो गए हैं। संवेदना की पकड़ और गहरी हो गयी है, मनोवैज्ञानिकता सूक्ष्मतर हो उठी है। इस कालावधि के आखिर में आदर्श से उनका पूर्ण मोहभंग हो चुका था।"[1] प्रश्न यह उठता है कि स्त्री विषयक प्रेमचंद का क्या नजरिया क्या था? साथ ही, अपने विचारों को उन्होंने अपने वास्तविक जीवन में किस हद तक अपनाया, अपना सके या उसे कहां तक निभा सके। भारतीय परिवेश में स्त्रियों के अधिकारों के लिए उन्होंने बहुत कुछ लिखा। प्रेमचंद के नारी चिंतन पर आर्य समाज, गांधीजी तथा बाद में चलकर प्रगतिवाद का प्रभाव पड़ा। उनका नारीवादी दृष्टिकोण उस समय के राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के बीच

बन रहा था। नवजागरण काल में राजा राममोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, महादेव गोविंद रानाडे, महर्षि कर्वे,महात्मा ज्योतिबा फुले, दयानंद सरस्वती, सर सैयद अहमद खान आदि के नाम स्त्रियों के प्रति समाज में जागृति लाने के लिए उल्लेखनीय हैं। इन महापुरुषों के सामाजिक विचारों ने स्त्री जाग्रति की दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन महापुरुषों के कई दशक बाद प्रेमचंद का आगमन एक लेखक के रूप में होता है। प्रेमचंद और गांधी जी भारतीय समाज में क्रमशः साहित्य व राजनीति में एक बिंदु पर साथ-साथ अपनी सक्रियता बनाये हुए थे।

भारतीय समाज पितृसत्तात्मक होने के कारण यहां पुत्रियों को वह स्थान नहीं मिल पाया जो पुत्रों को मिलता है, और यह स्थिति आज भी बहुत संतोषजनक नहीं है। जिस समाज में यह कहा जाता है कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:', वहाँ स्त्रियों की स्थिति दयनीय होना विडम्बनापूर्ण ही है। समय के साथ स्त्री विषयक दृष्टिकोण में परिवर्तन के कारण स्त्री को समाज में अभिशाप माना जाने लगा। प्रेमचंद के कथा साहित्य में इस सत्य का चित्रण मिलता है। समाज का पुरुष वर्ग अपनी स्त्री से इसलिए नाराज रहता है कि वह बालिका को जन्म देती है। 'नैराश्य' कहानी की निरुपमा ऐसी ही अभागनी स्त्री है यद्यपि वह संपन्न कुलीन कुल की वधू है परंतु कन्या जन्म के कारण सदैव पति से उपेक्षित रहती है कहानी का आरंभ किस प्रकार है आज आदमी अपनी स्त्री से इसलिए नाराज रहते हैं कि उसके लड़कियां क्यों होती हैं। लड़के क्यों नहीं होते। सीधे-सीधे सीधे मुंह बात नहीं करते। कई दिनों तक घर में ही नहीं आते और आते भी तो इस तरह खींचे तने रहते कि निरुपमा थर-थर कांपती रहती थी कि कहीं गरज ना उठे। सबसे बड़ी विपत्ति यह थी कि त्रिपाठी जी ने धमकी दी थी अब की कन्या हुई तो मैं घर छोड़कर निकल जाऊंगा। इस नर्क में क्षण भर भी न ठहरूंगा। निरुपमा को यह चिंता खाई जाती थी। निरुपमा घोर निराशा की दशा में अपनी भाभी को पत्र भेजती है। उसकी भाभी उसे महात्मा के दर्शन के लिए बुला लेती है और बोलती है कि "महात्मा का आशीर्वाद निष्फल नहीं जा सकता। अब वह पुत्रवती होगी।"[2] जब वह गर्भवती हुई तो सबके दिलों में आशाएं हिलोरे लेने लगी। उसका सम्मान बढ़ जाता है किंतु कुछ समय पश्चात जब पुनः कन्या हुई तो उसका जीवन चिंता ग्रस्त हो जाता है। फिर वही अपमान, वही अनादर, वही ताने। अंत में, इसी शोक में वह पुत्री को जनते ही मृत्यु को प्राप्त हो जाती है। हमारे समाज में नारी जीवन की आरंभिक दशा प्रेमचंद युगीन समाज में नैतिकता का दोहरा मानदंड था। जिन कार्यों के लिए पुरुषों की कोई आलोचना नहीं करता उसी के लिए स्त्री प्रताड़ित होती रही है। प्रेमचंद समाज के इस दोहरे मानदंड और संकीर्ण सोच पर करारा प्रहार करते हैं।

एक आदर्शमयी पुत्री और देशभक्ति से परिपूर्ण एक नागरिक के रूप में 'सती -1' कहानी में प्रेमचंद ने चिंतादेवी को चित्रित किया है। अपने क्रांतिकारी पिता की मृत्यु पर लोगों को शोक मनाता देख वह वीरोचित भाव से भरकर कहती है - "अगर उन्होंने वीरगति पायी, तो तुम लोग रोते क्यों हो? योद्धाओं के लिए इससे बढ़कर और कौन-सी मृत्यु हो सकती है? यह रोने का नहीं, आनंद मनाने का अवसर है।"[3] वह समय स्वतंत्रता आंदोलन का समय था और भारतीयों के मन में अपनी मिट्टी के प्रति निष्ठा, त्याग और बलिदान को बढ़ावा देने के लिए स्त्री आवाज़ को चुनना प्रेमचंद की दूरदर्शिता और उनकी सूक्ष्म दृष्टि का ही परिचायक है।

स्त्री को अपना मायका हमेशा ससुराल से भी प्यारा होता है। जिस घर में वह जन्म लेती है, बचपन बिताती है, उसे छोड़कर किसी दूसरे के घर मे बसना आसान नहीं होता है फिर भी समाज की यह रीति है कि स्त्री को पराए घर जाना ही पड़ता है। फिर भी, अपने घर यानी मायके के प्रति लगाव कभी खत्म नहीं होता बल्कि वह पहले से भी ज़्यादा बढ़ जाता है। 'दो बैलों की कथा' कहानी में झूरी के ससुराल से जब हीरा-मोती भाग कर वापस आ जाते हैं तब झूरी की पत्नी कह उठती है - "कैसे नमकहराम बैल हैं कि एक दिन वहां काम न किया; भाग खड़े हुए।"[4] अपने मायके के काम न आ सकने के दुख बाहर आ गया। कथाकार ने स्त्री के उस पक्ष का बहुत ही स्वाभाविक चित्र प्रस्तुत किया है।

जहां प्रेमचंद स्त्री के आदर्शमयी, स्नेहमयी - ममतामयी और त्यागमयी रूपों को ही प्रारम्भ में वाणी दे रहे थे वहीं उनकी कहानियां उत्तरोत्तर यथार्थ के निकट पहुंचने लगी थीं। 'बेटों वाली विधवा' कहानी में फूलमती के मुख से जलती हुई चिंगारियों की भांति यह शब्द निकल पड़े – "मैंने घर बनवाया; मैंने संपत्ति जोड़ी, मैंने तुम्हें जन्म दिया, पाला और आज मैं घर में गैर हूँ? मनु का यही कानून है और तुम उसी कानून पर चलना चाहते हो? अच्छी बात है। अपना घर द्वार लो। मुझे तुम्हारी आश्रिता बनकर नहीं रहना।"[5] इसमें फूलमती की दुर्दशा बेशक बेटों के कारण ही हुई हो पर फूलमती की बात सर्वमान्य थी। वे स्त्री के सक्षम होने में विश्वास रखते थे।

प्रेमचंद की स्त्री-दृष्टि और स्त्री पात्रों की बात की जाए तो प्रेमचंद के व्यक्तिगत जीवन के प्रसंग को भी जान लेना उचित रहेगा। उन्होंने मां के रूप में विमाता का तिरस्कार झेल और पत्नी के रुप में की पहली पत्नी से कभी नहीं बनी। शिवरानी देवी के रूप में उन्हें एक आदर्श सहयोगी मिली। प्रेमचंद के निजी जीवन की घटनाओं ने ही प्रेमचंद की स्त्री दृष्टि निर्मित करने में बड़ी भूमिका निभाई है। उन्होंने समाज के हर वर्ग को, हर तबके को अपने कथा साहित्य में स्थान है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि मां, पत्नी, बहन, प्रेमिका, शिक्षिका, वेश्या जितने रूप स्त्रियों के हो सकते हैं प्रेमचंद के साहित्य में दृष्टिगोचर होते हैं। डॉ इंद्रनाथ मदान प्रेमचंद के साहित्यिक उद्देश्य को धयान में रखते हुए लिखते हैं कि "प्रेमचंद ने पाठकों के मनोरंजन के लिए या स्त्रियों और पुरुषों की वासना तथा प्रेम की समस्या वाली कहानियों के प्रति उत्पन्न जिज्ञासा को शांत करने के लिए उपन्यास और कहानियों की रचना नहीं की। कला की उनकी भावना बड़ी ऊँची थी। जीवन की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं के संबंध में उनके जो विचार थे, उनको व्यक्त करने के का साधन ही वे कला को समझते थे।"[6] प्रेमचंद के समय जो समाज था वह आज से बहुत अलग नहीं था। उस समय हम विदेशी सत्ता के गुलाम में थे किंतु आज अपनों के द्वारा शोषित हो रहे हैं। ऐसे में समाज के हाशिये पर खड़े लोग आज भी क्या केंद्र में आ पाए हैं? यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है। एक साहित्यकार की नज़र सिर्फ अपने वर्तमान पर ही नहीं होती बल्कि वह भविष्य पर भी दृष्टि बनाये रखता है।

प्रेमचंद आधुनिक भारतीय साहित्य के ऐसे लेखक हैं जिनकी रचनाओं में निहित वैचारिकता के पुनर्पाठ की आवश्यकता हर दौर में और अधिक प्रासंगिक लगने लगती है। प्रेमचंद का समय औपनिवेशिकता के साथ भारतीय राष्ट्रवाद के संघर्ष के तीव्रतर होते जाने का दौर था। यही वह दौर था जब राष्ट्र-राज्य की व्यापक पृष्ठभूमि में स्त्रियों

की परिवर्तित होती भूमिका को देखते हुए उन्होंने अपनी कहानियों और समाज में उनके स्थान को लेकर समता की कल्पना की थी। प्रेमचंद जी ने स्त्री जागरण का संदेश भी दिया कि उनके विचार में पाश्चात्य उच्छृंखलता नहीं आनी चाहिए। उन्होंने स्त्री स्वतंत्रता को केवल आत्मस्वावलम्बन की आवश्यकता तक माना है। आलोचक डॉ रामचंद्र तिवारी लिखते हैं कि "नारी-जीवन के प्रति संवेदना-मिश्रित सुधारवादी दृष्टिकोण अपनाया है। प्रेमचंद अंत तक निर्णय नहीं कर सके थे कि नारी को पूर्ण स्वतंत्रता मिलनी चाहिए या नहीं। 'शान्ति' नामक कहानी में उनका यह द्वंद्व भलीभाँति प्रकट हुआ है।"[7] हिंदी साहित्यिक परंपरा में जहां स्त्रियां केवल कथा में एक पात्र मात्र से अधिक की स्थिति में उपस्थित नहीं थी, वहां यह संभवत प्रेमचंद ही थे जिन्होंने अपने स्त्री पात्रों को एक ठोस सामाजिक-आर्थिक आधार पर रखकर उनकी राजनीतिक अभिव्यक्ति को संभव बनाया।

21वीं सदी में जहां नए आदर्श और मूल्यों के फेर में नई पीढ़ी भौतिकता के प्रति आकर्षित हो रही है। ऐसे समय में प्रेमचंद के स्त्री पात्र एक सुखद अहसास दिलाते हैं। उनके स्त्री पात्र पश्चिमी सभ्यता की ओर आकर्षित भारतीय स्त्री के समक्ष एक चुनौती बनकर खड़ी हो जाती हैं। एक स्वस्थ समाज के निर्माण हेतु जितने भी मुक्ति संघर्ष हुए हैं उनमें से एक है स्त्री चिंतन। स्त्री अधिकारों के मिलने से आज वह अपने अधिकारों के प्रति सजग हुई है। लेकिन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो आज भी हमारे सामने ऐसी सामाजिक विसंगतियों हैं जो महिलाओं की गरिमा के अनुकूल नहीं हैं। आज साहित्यकारों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से विमर्श को रखा है। कहीं स्त्री-पुरुष दोनों को समान माना गया है तो कहीं स्त्री स्वयं को परंपराओं के बंधन से मुक्त कर आधुनिकता की दौड़ में दौड़ रही है। आज वह इतनी आगे निकल चुकी है कि हर क्षेत्र में अपनी अलग छवि बना ली है। शिक्षा के प्रचार प्रसार से ही स्त्री आज आर्थिक रूप से निर्भर हो चुकी है। मुंशी प्रेमचंद स्त्रियों की शिक्षा का समर्थन करते हैं और उनका दृढ़ था कि एक शक्ति संपन्न स्त्री ही समाज का सर्वांगीण विकास कर सकती है।

सन्दर्भ :

1. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - बच्चन सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या – 386
2. नैराश्य – प्रेमचंद, हिंदी समय डॉट कॉम
3. सती – 1, प्रेमचंद, हिंदी समय डॉट कॉम
4. दो बैलों की कथा - प्रेमचंद, हिंदी समय डॉट कॉम
5. बेटों वाली विधवा - प्रेमचंद, हिंदी समय डॉट कॉम
6. प्रेमचंद : एक विवेचना - डॉ. इंद्रनाथ मदान, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ संख्या – 152
7. हिंदी का गद्य साहित्य – डॉ रामचंद्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ संख्या – 695